Vol. 7, Issue: 3, March: 2019
ISSN:(P) 2347-5404 ISSN:(O)2320 771X

शालाकीय शिक्षा के सन्दर्भ में शिक्षक का उत्तरदायित्व

अजयकुमार हसमुखभाई जादव
शोध छात्र
छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपूर

शिक्षा किसी भी समाज की प्रगति का दर्पण है । किसी भी देश के भविष्य निर्धारण में शिक्षा वहुत बड़ा मापदण्ड है । कालान्तर मैं जबकि भारत राजनीतिक, सामाजिक एवं अन्तराष्ट्रीय समस्याओं के चक्रव्यूह में फंसा हुआ है, ऐसै समय में शिक्षा और विशेषकर अध्यापक शिक्षा हम समस्याओं को हल करने मैं महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है, किन्तु यह बड़े दु:ख का बिषय है कि अध्यापक शिक्षा इन समस्याओं के निराकरण में कुछ भी सकारात्मक एवं निर्णायक कदम उठाने मैं महसूस कर रहीं है। इन समस्याओं व् शिक्षा प्रक्रिया में भागीदारी समाज की वर्तमान पीढी को देखकर शिक्षकों के उत्तरदायित्वों कार्यों पर प्रश्न चिह्न लग गया है ।

आदमी की अपनी विशिष्टता हैं, क्योंकि यह अपनी पहचान बनाने के लिए सदा संघर्षरत है । आदमी आकाश है, देवता आकाश से उतरे हुए धूमकेतु नहीं है, आकाश तो एक निर्जीव नियति है, वसन्धुरा उपलब्धि है, वसुंधरा जीवन है, वसुन्धरां अक्षयवट हे | इस वसुंधरा पर सभी एक नयी भूमि पर खडे होते हैं । इस नयी भूमि का नाम है उर्ध्वासन कीं चरम संचेतना के लिए किसी प्रक्रिया की आवश्यकता नहीं हे । प्रतिबद्धता सफलता के श्रेय बिन्दु का सूत्राधार है । विश्वास, प्रेम और सहयोग प्रतिबद्धता का दूसरा अर्थ है; आत्मीय या उससे बढकर मी आगे में समाविष्ट होने क्री क्षमता । यह उत्कर्ष व्यक्ति का नहीं समवेत का उत्कर्ष है और समवेत उत्कर्ष सामाजिक होता है । यहीं समवेत उत्कर्ष कराना शिक्षक व्: दायित्व है ।

मानय जीवन संघर्षरत चेतना का प्रतीक है । संघर्षशील मानव अपनी क्यों के दीपक है । स'धर्ज हमारी नियति है, संघर्ष जीवन अपेक्षा है, संघ मूल चेतना है. संघर्ष नियन्ता हीं नहीं जीवनदाता भी है । प्रकाश महाशक्ति है, उर्जा है, विकेन्द्रीक तत्वों का ज्ञानपुंज है जो सर्जना का मार्ग खोलता हैं । यहीं मार्ग दिखाना शिक्षक का दायित्व है ।

अन्धकार में बहुत कुछ उपजा है, उपज का सम्बन्ध है अंकुर से. जिस सूर्य की तीव्रता से बचाना पडता हैं, किन्तु बाद में उसे बढने के लिए सूर्य के प्रकाश का भिक्षुक बनाना पड़ता है। यह सत्य है, यह नियति है। इसी प्रकार से प्रगति कौ पगडण्डी चाँदी प्रकाश में क्रमिक स्वर्ण रेखा की ओंर बढने लगती है, इसी स्वर्ण रेखा का दर्शन कराना शिक्षक का दायित्व है। शरीर में आत्मा की अनन्त उर्जा है, उसी अजर-अमर आत्म का विश्वास समग्र मानवता का संचय-कोश है। अन्धकार से प्रकाश की ओर हमारी यह यात्रा है, अनन्त, अनश्वर, सार्वभौम ओर सिंद्धिदायक इस यात्रा का दर्शन कराना ही गुरु का दायित्व है।

ज्ञान सागर पारदर्शी है, इसकी गहराइयॉ हैँ अनन्त परिश्रमी, उध्यावासी और मेधावी व्यक्तियों ने इसके अनेक अंशों का अनुभव किया है। मेधा का ऋण न कभी विश्व अदा कर सका है और न कभी कर सकेगा। उनके मन में असन्तोष था। वे सन्तोष की एक झलक पाने के लिए पागलों की तरह भटकते रहे पर वे पागल नहीं थे, पागल वे हैं जो सन्तोष कौ चैन में सोंस लेना जानते हैँ। भले ही वे न जाने कि सन्तोष में ऐश्वर्य का नाश होता है। प्रगति के द्वार बन्द होते हैं, प्रगति का मूल केन्द्र हें-असन्तोष तथा इसी का प्रतीक हे-अध्यापक का दायित्व।

प्रकाश महाशक्ति है, ऊर्जा है। अन्धकार से प्रकाश की ओर हमारे ज्ञान की यात्रा है। यह यात्रा अनन्त, अक्षुण्य, सार्वभौम और सिद्धिप्रद है। इसी लक्ष्य तक पहुंचना शिक्षक का दायित्व है।

गुरु तत्व की सम्पूर्ण शिक्षा गुरु शिक्षा में निहित है। गुरु द्वारा दी गयी शिक्षा शिष्य के ह्रदय में अनन्त प्रकाश प्रज्जवलित कर देती है। गुरु शिक्षा प्रणव स्वरुप है अलौकिक शक्ति से परिपूर्ण होती है, जिससे विशुद्ध प्रणरूपा ध्वनि निर्मित होती है जो अधिकारी शिष्य को चैतन्य स्वरूप प्रतिष्ठित कर देती है। सम्पूर्ण ब्रह्म दण्ड का ही विकास हैं। गुरु शिक्षा के शब्दों का स्वरूप शुद्ध और साफ होता हे, जो चिन्मय है, जिसके मलिन शब्द विकार स्वत: नष्ट हो जाते हैं तथा चिन्मय चित् शक्ति का ही केन्द्र है। गुरु शिक्षा का उददेश्य मानव मन को अंतर्मुखी कर देना है तथा उसे विदूप शुद्ध शब्द की उपलब्धि कराना। ब्रह्म सर्वत्र व्याप्त है, किन्तु साक्षात्कार के लेए गुरु की आवश्यकता है। जेसे काष्ठ में निहित अग्नि का साक्षात्कार संघर्ष से होता है वैसे हीं गुरु द्वारा हदय से ब्रह्म का साक्षात्कार होता है। जन्म जन्मान्तर के संस्कारो के सद्गुरु की प्राप्ति होती है। पहले तो सद्गुरु की प्राप्ति ही कठिन है फिर गुरु में पूर्व श्रद्धा शक्ति कठिन है, यदि श्रद्धाभाव उत्पन्न भी हो जाय तो गुरु कृपा कठिन है। सद्गुरु पुण्य कर्मों से ही मिलते हैं गुरु का शिष्य निष्काम कामना हित ब्रह्म निष्ठा होनी चाहिए जो ईंधन सहित अग्नि के समान शान्त है या सिन्धु हो या

बन्धु हो। परमतत्व और गुरुत्व में कोई भेद नहीं है। गुरु के दर्शन स्पर्श अथवा शब्द भाव से ही तत्त्व ज्ञान हो जाता है।

शिष्य ऐसा होना चाहिए जो गुरु को सब कुछ देय,
गुरु भी ऐसा होना चाहिए जो कोडी भर भी नहीं लेय।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मया, शंकर सिंह, अध्यापक शिक्षा असमंजस में, अध्ययन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्श, नई दिल्ली
2. स्नातक, विजयेन्द्र विमर्श के क्षण
3. नंदकिशोर नवल, भारतीय मूल्य की चिन्ता का विकास